 ISBN: 978-81-947902-7-3

भारत में नारी एक शास्त्रीय अवलोकन

डॉ. श्याम नारायण वर्मा
सहायक आचार्य
समाजशास्त्र
महामाया राजकीय महाविद्यालय,श्रावस्ती
उत्तरप्रदेश

सारांश

समाज रूपी रथ के दो पहियों में से एक का नाम नारी है, जिसके वगैर समाज अपनी निरन्तरता को चलायमान नही रख सकता, भले ही हिन्दी के कवि जयशंकर प्रसाद जी ने "नारी तुम श्रद्धा हो"कहकर वैदिकीय परम्परा का प्रकीर्णन किया हो, ससे भी पहले नारी अस्तित्व,उदित और मुदित थी और अस्तित्वमान थी। इसलिए नारी संसार को किसी काल किसी क्षेत्र में सीमित करना उसकी महत्ता की अवमानना है। संत विनोबा ने ठीक ही कहा कि "भारत में नारी के लिए इतना सम्मान है जिसका प्रमाण वेद स्वयं है स्त्री अधिक सूक्ष्म बुद्धिवाली होती है, पुरुषों से उदार होती है, क्योकि पुरुष परमेश्वर की आराधना,भक्ति, दातृव्य में कम पड़ जाता है। नारी ममत्व की सच्ची प्रतिमूर्ति होती है वह पुरुषों की भूख प्यास और पीड़ा का आभास कर लेती है क्योंकि उसका मन और चित्त हमेशा अपने ईष्ट की भक्ति में तन्मयता से लगाये रखती है। चित्त की स्थिरता और एकाग्रता ही नारी को पुरुष से अधिक पारखी, सहनशील औरदैदीप्यमान बनाती है।

उपाध्यायान दशाचार्यः आचार्याणां पिता।

सहस्रं तु पितृन् माता गौर वेणाति रिच्यते॥

मुनस्मृति में विर्णित उक्त श्लोक-से स्पष्ट होता है कि "दस उपाध्याय के बराबर एक आचार्य होता है। और सौ आचार्यों के बराबर एक पिता होता है और हजार

पिताओं से भी एक नारी का गौरवबड़ा है।“

अहिंसा की प्रतिमूर्ति के रूप में नारी का गुणगान महात्मा गांधी जी ने भी किया है उनका मानना था कि “ईश्वर ने जो प्रेमालु हृदय नारी को प्रदान किया है उससे पुरुष को वंचित रखा है।“ क्योंकि किसी सन्तान को जनने की क्षमता से युक्त नारी अपनी कोख में नौ मास तक अनेकों सुखों का बलिदान कर एक शिशु को जन्म देती है जन्म देते वक्त असह्य पीड़ा को वह सहती है फिर भी खुश रहती है क्योंकि वह मां बन रही है उसका यह आनंद उस पीड़ा पर भारी पड़ जाता है यह है नारी की सच्चाई। वह अपनी पीड़ा,अपमान और अनगिनत कष्टों को मूक बनकर सहती है इस आधार पर नारी नम्रता विनम्रता वैदिक काल को नारी समाज का स्वर्णिम काल कहा जाता है जिसमें नारी को उसके अथोचित सम्मान से विभुषित करने का प्रमाण वेद ग्रंथों में मिलता है वेदों में वर्णित है कि नर के समान नारी को भी इस युग में वह सब सुख सुविधाएं व सम्मान उपलब्ध था। जिसका नारी भरपूर उपभोग करने के लिए आजाद थी। क्योंकि वैदिक युग में नारी हर क्षेत्र में पुरुषों के समान जीवन जीने के लिए अधिकृत थी, शास्त्रार्थ हो, हवन-पूजन हो, पारिवारिक निर्णयों में, रणक्षेत्रों में लगभग समस्त स्थानों पर नारी बिना किसी बाधा के अपनी अहम एवं निर्णायक भूमिका में अपने को पाती थी। शिक्षा दीक्षा के क्षेत्र में कोई असमानता न थी लड़के लड़कियांे को समान अवसर उपलब्ध था यहां तक यज्ञोपवीत संस्कार दोनों का होता था। अर्थात लैंगिक आधार पर भेद-भाव से वेदकाल अछूता था शायद इसीलिए इस काल को नारी समाज के लिए स्वर्णिम काल कहा जाताहै। बालिकाओं के लिए दो वर्ग बनाये गये थे-

1. ब्रह्[रवादिनी
2. सद्योबधू/सद्योद्वाह।

ताजिन्दगी दर्शन और आध्यात्म विद्या को अर्जन करने की इच्छुक बालिका प्रथम संवर्ग में अध्ययन करती थी।वह वेदों के अतिरिक्त पूर्व मीमांसा में विशेषता प्राप्त

करके तदनुरूप् जीवन बिताती थी उसका जीवन निवृत्ति परक होता था। सद्योवधू या सद्योद्वाह ग्रार्हस्थ जीवन संबंधी शास्त्र का विशेष रूप से अध्ययन करके अपने को तदनुकूल बनाने का प्रयत्न किया करती थी। वेद कालीन समय में शिक्षा में नर नारी दोनों के सर्वांगीण विकास का भरपूर ध्यान रखा जाता था अतयव तत्कालीन समय में लैंगिक भेदभाव का कोई प्रमाण नही मिलता सभी का समेकित लक्ष्य यही था कि स्नातक होने के बाद लड़के लड़कियां यदि सन्यास लेना चाहें तो उसके लिए उन्हें सक्षमता प्रदान की गयी थी। और अगर गृहस्थ जीवन प्रवेश लेना चाहते थें तो उन्हे श्रेष्ठ गृहस्थ जीवन बिताने की अनुमति थी।

लोपा मुद्रा, अपाला घोषा,गोगा,विश्ववारा अदिति जैसी तमाम ऋषि महिलाओं ने अपने जीवन को वेदज्ञाता के रूप में अजर अमर कर दिया है। उपनिषदों में मैत्रेयी,गार्गी, विदग्धा-उद्यातका जैसी तमाम विदुषियों का वर्णन बखूबी किया गयाहै। इसी समय में स्वयंवर प्रथा प्रचलन थी जिसमें समस्त युवतियों को अपने मनोनकूल बर का चयन करने की आजादी थी साथ ही वधू को मंत्रों मे अत्यधिक आदर और सम्मान दिया गया था। घर की गृहलक्ष्मी थी घर और परिवार की साम्राज्ञी की भांति पदस्थापित करके उसे आनंदित होने का सुअवसर सम्मान सहित उपलब्ध था। जैसा कि वेद कहता है-

सम्राज्येधि श्वशुरेषु सम्राज्युत देवृषु।

ननान्दुः सम्राज्येधि सम्राज्युत श्वश्र्वाः ॥

अर्थात ऐ नवबधू आप जिस नवीन दुनिया (गृहस्थ जीवन) में पांव रखने जा रही हो,वहां की तू रानी हो,साम्राज्ञी हो। वहां तुम्हारा ही राज्य होगा । तुम्हारे श्वसुर और सास,ननद और देवर तुम्हारे राज्य मे ंआनंदित और सुखी रहंे। स्त्री की प्रस्थिति,उसकी महत्ता पारिवारिक जीवन में सुख शांति एवं आनंद की त्रिवेणी प्रवाहित करती थी। प्राचीन युग में स्त्री की यह स्थिति अत्यन्त गरिमापूर्ण एवं प्रशंसनीय थी। नारी उत्तम जीवन और चरित्र की सद्गामिनी थी, पवित्र बहन थी,

बात्सल्य और स्नेह पूर्ण माता थी और आदर्श कन्या थी विद्या कला कौशल सेवा जैसे तमाम गुणों से आच्छादित थी। वेद भी उस समय की नारियों की उच्चतम सामाजिक प्रतिष्ठा प्रदान करके नारी सम्मान को और बढ़ाने का कार्य किया था।

उत्तर वैदिक काल में नारी

यह काल भी नारी जाति के लिए सन्तोषजनक कहा जा सकता है फिर भी इस काल में नारी की प्रस्थिति में कुछ अन्तर की विशेषता से युक्त था फिर भी इस युग में भी नारी वेदाध्ययन करके गृहस्थ आश्रम में प्रवेश करती थी- ब्रह्रचर्येण कन्या युवान बिन्दते पतिम्।

गोमिल गृह्रसूत्र में आता है कि कन्या उपनीत होकर, यज्ञोपवीत धारण करके ही विवाह मंडप मे आती थी। इससे स्पष्ट होता था कि उसने समुचित ज्ञानार्जन कर लिया है। विवाह को अत्यन्त पवित्र बन्धन माना गया था। नर नारी दोनों को विवाह विच्छेद करने की मनाही थी परन्तु इस मामले में नारियों की अपेक्षा पुरुषों को अधिक प्रतिबन्धित किया गया था क्योंकि अगर कोई पुरुष अपनी पत्नी का परित्याग करता था तो उसे कठोर दण्ड का भागीदार बनना पड़ता था। आपस्तम्ब सूत्र में आता है कि ऐसे पति को छः महीने तक गर्दभचर्म ओढ़कर प्रतिदिन 7 घरों से यह कहकर भिक्षा मांगनी पड़ती थी कि उस पुरुष को भिक्षा दीजिए जिसने अपनी पत्नी को त्याग दिया है इन तमाम उदाहरणों से स्पष्ट हो जाता है कि उत्तर वैदिक काल में जैसी पूर्ववत स्थिति में नारी सम्मान की पात्र थी अतः उसकी प्रस्थिति में कोई खास गिरावट नही आयी थी वह समान प्राप्त थी तमाम अधिकरों से युक्त थी उसकी प्रस्थिति सम्मान सूचक थी। परम्परा प्राप्त ज्ञान से आर उसके अनुशीलन से यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि स्त्री न केवल पुरुष के बराबर थी बल्कि तत्वतः वह पुरुष से श्रेष्ठ थी। वह प्रथम शिक्षिका तथा मात्रृ पद प्राप्त करने के कारण दो लोकों को अपने ज्ञान विज्ञान एवं सेवा परायणता से तथा धर्म संस्कार संबंधी पाठ के साथ अक्षर ब्रह्र की प्रथम गुरु के रूप में समादृत रही है। अतः कुछ अपवादों को छोड़कर निःसन्देह यह स्पष्ट है कि

प्राचीन भारतीय साहित्य में यह कहा गया है कि स्त्री सर्व प्रकार से श्रेष्ठ है और लोक मे पूजित है। इनका आदर सम्मान प्रत्येक का कर्तव्य है।

महाकाव्य काल में नारी

पूर्व काल के अनन्तर इस काल में नारी का सम्मान सुरक्षित था उसे अध्ययन अध्यापन का समान अवसर भलिभांति उपलब्ध था रामायण महाभारत जैसे उपजीव्य ग्रंथ इसके उदाहरण हैं-

संध्या कालमना श्यामा धु्रवमेष्यति जानकी।
नदी चेमां शुभजलां संध्यार्थ वरवर्णिनी॥

उपर्युक्त श्लोक में सीता सावित्री दमयन्ती सती सावित्री जैसी तमाम नारियों के प्रति सम्मान इस तथ्य का सूचक है कि उक्त काल में नारी सम्मान से ओतप्रोत थी क्योंकि माता को गुरु श्रेष्ठ का दर्जा प्राप्त था-“गुरुणा चैव सर्वेषां माता परमें को गुरूः।“ इस काल के अन्त तक आते-आते किन्ही कारणों से नारी की गरिमा उत्तरोत्तर गिरने लगी क्योंकि इसी काल में विवाह के आठ प्रकार का प्रचलन मिला जिससे यह सिद्ध होने लगा कि हिन्दू विवाह एक धार्मिक संस्कार है इसमें कहीं न कहीं सीधे तौर पर प्रक्षेप दिखायी देने लगा जो ब्रह्र दैव आर्ष एवं प्रजापत्य उत्तम प्रकारों में गिने जाते थे किन्तु वहीं राक्षस गांधर्व एवं पिशाच विवाह की गणना भी और वे निम्न कोटि के माने गये। नियोग की प्रथा भी शास्त्रों द्वारा अनुमोदित थी राजा व संपन्न वर्ग के लोगों में वहु विवाह की छूट मिल चुकी थी जिससे नारियों की दशा में गिरावट आना आरम्भ हो गया स्त्री के प्रति उन्मुखता और अनुशासन हीनता में वृद्धि होने लगी।भरी सभा में द्रौपदी का चीरहरण इसका सटीक उदाहरण है। अतः यह साबित होता है कि इस काल में नारी की अस्मिता में गिरावट आ गयी थी।

बौद्धकाल साहित्य में नारी

तथागत बृद्ध के धम्म में जब नारी के प्रवेश की अनुमति मिली तो उनकी आशंका निर्मूल नही थी कि इससे नैतिकता और चरित्र में मर्यादा में गिरावट संभव है

बुद्ध स्वयं एक संत थे उन्हे ज्ञात था कि अध्यात्म की साधना में स्त्री कामना कहीं स्थान स्खलित कर सकती है। विनयपिटक में स्थान-स्थान पर दुक्कट संबंधी निषेधात्मक नियम बनाये गये। यह भी स्पष्ट होता है कि बौद्ध साहित्य में व्यवस्था दिये जाने के बावजूद वह सफलता न प्राप्त कर सका पुरुष मन का मनोविज्ञान विगड़। बौद्ध मठों में भिक्षुणियों के शिक्षण की व्यवस्था थी। थेरी गाथा जैसी रचनाएं उनकी योग्यता बुद्धिमत्ता का प्रमाण कही जा सकती हैं बौद्ध साहित्य में स्त्री पदाधिकारों के मध्य वैचारिक मत वैभिन्य के साथ-साथ परस्पर लड़ाई झगड़ों का उल्लेख मिलता है। इसके मूल में श्रेष्ठ पदाधिकार ईष्या द्वैष ज्येष्ठ कनिष्ठ जैसे मनोविज्ञान शामिल हैं। पारिवारिक कलह से ऊबकर बहुत सी स्त्रियां बौद्ध धर्म में प्रावर्जित होती थीं। बौद्ध भिक्षुणी बनने की स्वैच्छाचारिता भी इस समय विद्यमान थी स्वेच्छा से भी तथागत के धम्म से प्रभावित होकर भिक्षुणियां संवासिनी बनती थी।

स्मृतिकाल में नारी

इस कालखण्ड में नारी गरिमा मिश्रित रूप में प्रचारित प्रसारित एवं पदस्थापित हुई। यहां नारी के आदरणीय सम्मान के साथ अपमान उपभोग और असोभनीय स्थिति का भी जिक्र मिलता है। पुरुष वर्ग नारी वर्ग को रक्षणीया मानने लगा था मृत्यु पर्यन्त नारी को अधीन रखने की बात होने लगी मनुसंहिता में नारी के दोनों पक्षों का उल्लेख मिला-

यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः॥

यत्रैतास्तु न पूज्यन्ते सत्र्वाास्तत्राफलाः क्रियाः॥

अर्थात जिस कुल में नारियों की पूजा होती है उस कुल में देवता प्रसन्न रहते हैं जहां ऐसा नहीं होता वहां कुल देवता प्रसन्न नही होते और सभी प्रकार के क्रिया कर्म निष्फल हो जाते हैं। कथन से यह स्पष्ट हुआ कि नारी को विशेष सम्मान प्राप्त था साथ ही ऐसे कथन भी प्राप्त होते हैं जिससे यह प्रतीत होता है कि स्त्री के अपमान पर चिन्ता प्रकट की गयी-

शोचन्ति जामयो यत्र विनश्यत्याशु तत् कुलम्।

न शोचन्ति तु यत्रैता वर्द्धतेतद्धि सत्र्वदा॥

अर्थात इससे आशय है कि जिस कुल में नारी दुःखी रहती है उस कुल का शीध्र ही नाश हो जाता है और जहां नारी सुखी रहती है वहां परिवार की सतत् श्रीवृद्धि होती है।

निश्कर्षतः यह द्योतित होता है कि नारी का अनादर असभ्यता है उससे लोक में यह प्रसिद्ध है कि लक्ष्मी वापस चली जातीं हैं और रुष्ट हो जातीं हैं। लक्ष्मी को ऐश्वर्य का प्रतीक माना गया है और स्त्री ऐश्वर्य का ही प्रतीक है। स्त्री सम्मान सभ्य समाज के लिए सदैव प्रासंगिक बना रहेगा उसके अतुल्य योगदान की श्रेष्ठता सिद्ध है स्त्री अपनी शक्ति ममता वात्सल्य त्याग, विद्या सेवा सभी प्रकार से पोषण उन्नयन और संवर्धन कारिका है अपनी भूमिका में अटल,अजर,और अमर है। यही कारण है कि वह आदर सूचक पदों से अभिहित और विभूषित रही है अतः असंदिग्ध रूप से लोक समाज में नारी का दाय स्वर्णिम रहा है और आने वाले युगों में भी विभिन्न सम्बंधों एवं कर्तव्यों के रूप में उसका प्रथम अस्तित्व अक्षुण्ण बना रहेगा।